मिस पाल

मोहन राकेश

मिस पाल

https://www.hindiadda.com/miss-pal/

वह दूर से दिखाई देती आकृति मिस पाल ही हो सकती थी।

फिर भी विश्वास करने के लिए मैंने अपना चश्मा ठीक किया। नि:संदेह, वह मिस पाल ही थी। यह तो खैर मुझे पता था कि वह उन दिनों कुल्लू में ही कहीं रहती है, पर इस तरह अचानक उससे भेंट हो जाएगी, यह नहीं सोचा था। और उसे सामने देख कर भी मुझे विश्वास नहीं हुआ कि वह स्थायी रूप से कुल्लू और मनाली के बीच उस छोटे-से गाँव में रहती होगी। जब वह दिल्ली से नौकरी छोड़ कर आई थी, तो लोगों ने उसके बारे में क्या-क्या नहीं सोचा था !

बस रायसन के डाकखाने के पास पहुँच कर रुक गई। मिस पाल डाकखाने के बाहर खड़ी पोस्टमास्टर से कुछ बात कर रही थी। हाथ में वह एक थैला लिए थी। बस के रुकने पर न जाने किस बात के लिए पोस्टमास्टर को धन्यवाद देती हुई वह बस की तरफ मुड़ी। तभी मैं उतर कर उसके सामने पहुँच गया। एक आदमी के अचानक सामने आ जाने से मिस पाल थोड़ा अचकचा गई, मगर मुझे पहचानते ही उसका चेहरा खुशी और उत्साह से खिल गया।

"रणजीत तुम?" उसने कहा, "तुम यहाँ कहाँ से टपक पड़े?"

"मैं इस बस से मनाली से आ रहा हूँ।" मैंने कहा।

"अच्छा ! मनाली तुम कब से आए हुए थे?"

"आठ-दस दिन हुए, आया था। आज वापस जा रहा हूँ।"

"आज ही जा रहे हो?" मिस पाल के चेहरे से आधा उत्साह गायब हो गया, "देखो, कितनी बुरी बात है कि आठ-दस दिन से तुम यहाँ हो और मुझसे मिलने की तुमने कोशिश भी नहीं की। तुम्हें यह तो पता ही था कि मैं आजकल कुल्लू में हूँ।"

"हाँ, यह तो पता था, पर यह नहीं पता था कि कुल्लू के किस हिस्से में हो। अब भी तुम अचानक ही दिखाई दे गईं,नहीं मुझे कहाँ से पता चलता कि तुम इस जंगल को आबाद कर रही हो?"

"सचमुच बहुत बुरी बात है," मिस पाल उलाहने के स्वर में बोली, "तुम इतने दिनों से यहाँ हो और मुझसे तुम्हारी भेंट हुई आज जाने के वक्त...।"

ड्राइवर जोर-जोर से हॉर्न बजाने लगा। मिस पाल ने कुछ चिढ़ कर ड्राइवर की तरफ देखा और एक साथ झिड़कने और क्षमा माँगने के स्वर में कहा, "बस जी एक मिनट। मैं भी इसी बस से कुल्लू चल रही हूँ। मुझे कुल्लू की एक सीट दे दीजिए। थैंक यू। थैंक यू वेरी मच !" और फिर मेरी तरफ मुड़कर बोली, "तुम इस बस से कहाँ तक जा रहे हो?"

"आज तो इस बस से जोगिन्दरनगर जाऊँगा। वहाँ एक दिन रहकर कल सुबह आगे की बस पकड़ूँगा।"

ड्राइवर अब और जोर से हॉर्न बजाने लगा। मिस पाल ने एक बार क्रोध और बेबसी के साथ उसकी तरफ देखा और बस के दरवाजे की तरफ बढ़ती हुई बोली, "अच्छा, कुल्लू तक तो हम लोगों का साथ है ही, और बात कुल्लू पहुँच कर करेंगे। मैं तो कहती हूँ कि तुम दो-चार दिन यहीं रुको, फिर चले जाना।"

बस में पहले ही बहुत भीड़ थी। दो-तीन आदमी वहाँ से और चढ़ गए थे, जिससे अंदर खड़े होने की जगह भी नहीं रही थी। मिस पाल दरवाजे से अंदर जाने लगी तो कंडक्टर ने हाथ बढ़ाकर उसे रोक दिया। मैंने कंडक्टर से बहुतेरा कहा कि अंदर मेरे वाली जगह खाली है, मिस साहब वहाँ बैठ जाएँगी और मैं भीड़ में किसी तरह खड़ा होकर चला जाऊँगा, मगर कंडक्टर एक बार जिद पर अड़ा तो अड़ा ही रहा कि और सवारी वह नहीं ले सकता। मैं अभी उससे बात कर ही रहा था कि ड्राइवर ने बस स्टार्ट कर दी। मेरा सामान बस में था, इसलिए मैं दौड़कर चलती बस में सवार हो गया। दरवाजे से अंदर जाते हुए मैंने एक बार मुड़कर मिस पाल की तरफ देख लिया। वह इस तरह अचकचाई-सी खड़ी थी जैसे कोई उसके हाथ से उसका सामान छीनकर भाग गया हो और उसे समझ न आ रहा हो कि उसे अब क्या करना चाहिए।

बस हल्के-हल्के मोड़ काटती कुल्लू की तरफ बढ़ने लगी। मुझे अफसोस होने लगा कि मिस पाल को बस में जगह नहीं मिली तो मैंने ही क्यों न अपना सामान वहाँ उतरवा लिया। मेरा टिकट जोगिन्दरनगर का था, पर यह जरूरी नहीं था कि उस टिकट से जोगिन्दरनगर तक जाऊँ ही। मगर मिस पाल से भेंट कुछ ऐसे आकस्मिक ढंग से हुई थी और निश्चय करने के लिए समय इतना कम था कि मैं यह बात उस समय सोच भी नहीं सका था। थोड़ा-सा भी समय और मिलता, तो मैं जरूर कुछ देर के लिए वहाँ उतर जाता। उतने समय में तो मैं मिस पाल से कुशल-समाचार भी नहीं पूछ सका था, हालाँकि मन में उसके संबंध में कितना-कुछ जानने की उत्सुकता थी। उसके दिल्ली छोड़ने के बाद लोग उसके बारे में जाने क्या-क्या बातें करते रहे थे। किसी का ख्याल

था कि उसने कुल्लू में एक रिटायर्ड अँग्रेज मेजर से शादी कर ली है और मेजर ने अपने सेब के बगीचे उसके नाम कर दिए हैं। किसी की सूचना थी कि उसे वहाँ सरकार की तरफ से वजीफा मिल रहा है और वह करती-वरती कुछ नहीं, बस घूमती और हवा खाती है। कुछ ऐसे लोग भी थे जिनका कहना था कि मिस पाल का दिमाग खराब हो गया है और सरकार उसे इलाज के लिए अमृतसर पागलखाने में भेज रही है। मिस पाल एक दिन अचानक अपनी लगी हुई पाँच सौ की नौकरी छोड़कर चली आई थी, उससे लोगों में उसके बारे में तरह-तरह की कहानियाँ प्रचलित थीं।

जिन दिनों मिस पाल ने त्यागपत्र दिया, मैं दिल्ली में नहीं था। लंबी छुट्टी लेकर बाहर गया था। मगर मिस पाल के नौकरी छोड़ने का कारण मैं काफी हद तक जानता था। वह सूचना विभाग में हम लोगों के साथ काम करती थी और राजेंद्रनगर में हमारे घर से दस-बारह घर छोड़कर रहती थी। दिल्ली में भी उसका जीवन काफी अकेला था,क्योंकि दफ्तर के ज्यादातर लोगों से उसका मनमुटाव था और बाहर के लोगों से वह मिलती बहुत कम थी। दफ्तर का वातावरण उसे अपने अनुकूल नहीं लगता था। वह वहाँ एक-एक दिन जैसे गिनकर काटती थी। उसे हर एक से शिकायत थी कि वह घटिया किस्म का आदमी है, जिसके साथ उसका उठना-बैठना नहीं हो सकता।

"ये लोग इतने ओछे और बेईमान हैं।" वह कहा करती, "इतनी छोटी और कमीनी बातें करते हैं कि मेरा इनके बीच काम करते हर वक्त दम घुटता रहता है। जाने क्यों ये लोग इतनी छोटी-छोटी बातों पर एक-दूसरे से लड़ते हैं और अपने छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए एक-दूसरे को कुचलने की कोशिश करते रहते हैं!"

मगर उस वातावरण में उसके दुखी रहने का मुख्य कारण दूसरा था, जिसे वह मुँह से स्वीकार नहीं करती थी। लोग इस बात को जानते थे, इसलिए जान-बूझकर उसे छेड़ने के लिए कुछ-न-कुछ कहते रहते थे। बुखारिया तो रोज ही उसके रंग-रूप पर कोई-न-कोई टिप्पणी कर देता था।

"क्या बात है मिस पाल, आज रंग बहुत निखर रहा है!"

दूसरी तरफ से जोरावरसिंह बात जोड़ देता, "आजकल मिस पाल पहले से स्लिम भी तो हो रही हैं।"

मिस पाल इन संकेतों से बुरी तरह परेशान हो उठती और कई बार ऐसे मौके पर कमरे से उठकर चली जाती। उसकी पोशाक पर भी लोग तरह-तरह की टिप्पणियाँ करते रहते थे। वह शायद अपने मुटापे की क्षतिपूर्ति के लिए ही बाल छोटे कटवाती थी, बगैर

बाँह की कमीजें पहनती थी और बनावसिंगार से चिढ़ होने पर भी रोज काफी समय मेकअप पर खर्च करती थी। मगर दफ्तर में दाखिल होते ही उसे किसी-न-किसी के मुँह से ऐसी बात सुनने को मिल जाती थी, "मिस पाल, इस नई कमीज का डिजाइन बहुत अच्छा है। आज तो गजब ढा रही हो तुम!"

मिस पाल को इस तरह की हर बात दिल में चुभ जाती थी। जितनी देर दफ्तर में रहती, उसका चेहरा गंभीर बना रहता। जब पाँच बजते, तो वह इस तरह अपनी मेज से उठती जैसे कई घंटे की सजा भोगने के बाद उसे छुट्टी मिली हो। दफ्तर से उठकर वह सीधी अपने घर चली जाती और अगले दिन सुबह दफ्तर के लिए निकलने तक वहीं रहती। शायद दफ्तर के लोगों से तंग आ जाने की वजह से ही वह और लोगों से भी मेलजोल नहीं रखना चाहती थी। मेरा घर पास होने की वजह से, या शायद इसलिए कि दफ्तर के लोगों में एक मैं ही था जिसने उसे कभी शिकायत का मौका नहीं दिया था, वह कभी शाम को हमारे यहाँ चली आती थी। मैं अपनी बुआ के पास रहता था और मिस पाल मेरी बुआ और उनकी लड़कियों से काफी घुल-मिल गई थी। कई बार घर के कामों में वह उनका हाथ भी बँटा देती थी।

किसी दिन हम उसके यहाँ चले जाते थे। वह घर में समय बिताने के लिए संगीत और चित्रकला का अभ्यास करती थी। हम लोग पहुँचते तो उसके कमरे से सितार की आवाज आ रही होती या वह रंग और कूचियाँ लिए किसी तस्वीर में उलझी होती। मगर जब वह इन दोनों में से कोई भी काम न कर रही होती तो अपने तख्त पर बिछे मुलायम गद्दे पर दो तकियों के बीच लेटी छत को ताक रही होती। उसके गद्दे पर जो झीना रेशमी कपड़ा बिछा रहता था, उसे देखकर मुझे बहुत चिढ़ होती थी। मन करता था कि उसे खींचकर बाहर फेंक दूँ। उसके कमरे में सितार, तबला, रंग, कैनवस, तस्वीरें, कपड़े तथा नहाने और चाय बनाने का सामान इस तरह उलझे-बिखरे रहते थे कि बैठने के लिए कुर्सियों का उद्धार करना एक समस्या हो जाती थी। कभी मुझे उसके झीने रेशमी कपड़े वाले तख्त पर बैठना पड़ जाता तो मुझे मन में बहुत ही परेशानी होती। मन करता कि जितनी जल्दी हो वहाँ से उठ जाऊँ। मिस पाल अपने कमरे के चारों तरफ खोजकर जाने कहाँ से एक चायदानी और तीन-चार टूटी प्यालियाँ निकाल लेती और हम लोगों को 'फर्स्ट क्लास बोहीमियन कॉफी' पिलाने की तैयारी करने लगती। कभी वह हम लोगों को अपनी बनाई तस्वीरें दिखाती और हम तीनों- मैं और मेरी दोनों बहनें- अपना अज्ञान छिपाने के लिए उनकी प्रशंसा कर देते। मगर कई बार वह हमें बहुत उदास मिलती और ठीक ढंग से बात भी न करती। मेरी बहनें ऐसे

मौके पर उससे चिढ़ जातीं और कहतीं कि वे उसके यहाँ फिर नहीं जाएँगी। मगर मुझे ऐसे अवसर पर मिस पाल से ज्यादा सहानुभूति होती।

आखिरी बार जब मैं मिस पाल के यहाँ गया, मैंने उसे बहुत ही उदास देखा था। मेरा उन दिनों एपेंडेसाइटिस का ऑपरेशन हुआ था और मैं कई दिन अस्पताल में रहकर आया था। मिस पाल उन दिनों रोज अस्पताल में खबर पूछने आती रही थी। बुआ अस्पताल में मेरे पास रहती थी पर खाने-पीने का सामान इकट्ठा करना उनके लिए मुश्किल था। मिस पाल सुबह-सुबह आकर सब्जियाँ और दूध दे जाती थी। जिस दिन मैं उसके यहाँ गया, उससे एक ही दिन पहले मुझे अस्पताल से छुट्टी मिली थी और मैं अभी काफी कमजोर था। फिर भी उसने मेरे लिए जो तकलीफ उठाई थी, उसके लिए मैं उसे धन्यवाद देना चाहता था।

मिस पाल ने दफ्तर से छुट्टी ले रखी थी और कमरा बंद किए अपने गद्दे पर लेटी थी। मुझे पता लगा कि शायद वह सुबह से नहाई भी नहीं है।

"क्या बात है, मिस पाल? तबीयत तो ठीक है?" मैंने पूछा।

"तबीयत ठीक है," उसने कहा, "मगर मैं नौकरी छोड़ने की सोच रही हूँ।"

"क्यों? कोई खास बात हुई है क्या?"

"नहीं, खास बात क्या होगी? बात बस इतनी ही है मैं ऐसे लोगों के बीच काम कर ही नहीं सकती। मैं सोच रही हूँ कि दूर के किसी खूबसूरत-से पहाड़ी इलाके में चली जाऊँ और वहाँ रहकर संगीत और चित्रकला का ठीक से अभ्यास करूँ। मुझे लगता है, मैं खामखाह यहाँ अपनी जिंदगी बरबाद कर रही हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि इस तरह की जिंदगी जीने का आखिर मतलब ही क्या है? सुबह उठती हूँ, दफ्तर चली जाती हूँ। वहाँ सात-आठ घंटे खराब करके घर आती हूँ, खाना खाती हूँ और सो जाती हूँ। यह सारा का सारा सिलसिला मुझे बिलकुल बेमानी लगता है। मैं सोचती हूँ कि मेरी जरूरतें ही कितनी हैं? मैं कहीं भी जाकर एक छोटा-सा कमरा या शैक लूँ तो थोड़ा-सा जरूरत का सामान अपने पास रखकर पचास-साठ या सौ रुपए में गुजारा कर सकती हूँ। यहाँ मैं जो पाँच सौ लेती हूँ, वे पाँच के पाँच सौ हर महीने खर्च हो जाते हैं। किस तरह खर्च हो जाते हैं, यह खुद मेरी समझ में नहीं आता। पर अगर जिंदगी इसी तरह चलती है, तो क्यों मैं खामखाह दफ्तर जाने-आने का भार ढोती रहूँ? बाहर रहने में कम से कम अपनी स्वतंत्रता तो होगी। मेरे पास कुछ रुपए पहले के हैं, कुछ मुझे प्राविडेंट फंड के मिल जाएँगे। इतने में एक छोटी-सी जगह पर मेरा काफी दिन गुजारा

हो सकता है। मैं ऐसी जगह रहना चाहती हूँ जहाँ यहाँ की ही गंदगी न हो और लोग इस तरह की छोटी हरकतें न करते हों। ठीक से जीने के लिए इन्सान को कम से कम इतना तो महसूस होना चाहिए कि उसके आसपास का वातावरण उजला और साफ है, और वह एक मेंढक की तरह गंदले पानी में नहीं जी रहा।"

"मगर तुम यह कैसे कह सकती हो कि जहाँ भी तुम जाकर रहोगी, वहाँ हर चीज वैसी ही होगी जैसी तुम चाहती हो? मैं तो समझता हूँ कि इन्सान जहाँ भी चला जाए, अच्छी और बुरी दोनों तरह की चीजें उसे अपने आसपास मिलेंगी ही। तुम यहाँ के वातावरण से घबराकर कहीं और जाती हो, तो यह कैसे कहा जा सकता है कि वहाँ का वातावरण भी तुम्हें ऐसा ही नहीं लगेगा? इसलिए मेरे ख्याल से नौकरी छोड़ने की बात तुम गलत सोचती हो। तुम यहीं रहो और अपना संगीत और चित्रकला का अभ्यास करती रहो। लोग जैसी बातें करते हैं, करने दो।"

पर मिस पाल की वितृष्णा इससे कम नहीं हुई। "तुम नहीं समझते, रणजीत।" वह बोली, "यहाँ ऐसे लोगों के बीच और रहूँगी, तो मेरा दिमाग बिलकुल खोखला हो जाएगा। तुम नहीं जानते कि मैं जो तुम्हारे लिए सुबह दूध और सब्जियाँ लेकर जाती रही हूँ, उसे लेकर भी ये लोग क्या-क्या बातें करते रहे हैं। जो लोग अच्छे-से-अच्छे काम का ऐसा कमीना मतलब लेते हों उनके बीच आदमी रह ही कैसे सकता है? मैंने यह सब बहुत दिन सह लिया है, अब और मुझसे नहीं सहा जाता। मैं सोच रही हूँ जितनी जल्दी हो सके यहाँ से चली जाऊँ। बस यही एक बात तय नहीं कर पा रही कि जाऊँ कहाँ। अकेली होने से किसी अनजान जगह जाकर रहते डर लगता है। तुम जानते ही हो कि मैं...।" और बात बीच में छोड़कर वह उठ खड़ी हुई, "अच्छा, तुम्हारे लिए कुछ चाय-वाय तो बनाऊँ। तुम अभी अस्पताल से निकल कर आए हो और मैं हूँ कि अपनी ही बात किए जा रही हूँ। तुम्हें अभी कुछ दिन घर पर आराम करना चाहिए। अभी से इस तरह चलना-फिरना ठीक नहीं।"

"मैं चाय नहीं पिऊँगा," मैंने कहा, "मैं तुम्हें कुछ समझा तो नहीं सकता, सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि तुम लोगों की बातों को जरूरत से ज्यादा महत्व दे रही हो। मेरा यह भी ख्याल है कि लोग वास्तव में उतने बुरे नहीं हैं जितना कि तुम उन्हें समझती हो। अगर तुम इस नजर से सोचो कि...।"

"इस बात को रहने दो," मिस पाल ने मेरी बात बीच में काट दी, "मैं इन लोगों से दिल से नफरत करती हूँ। तुम इन्हें इन्सान समझते हो? मुझे तो ऐसे लोगों से अपना पिंकी ज्यादा अच्छा लगता है। यह उन सबसे कहीं ज्यादा सभ्य है।"

पिंकी मिस पाल का छोटा-सा कुत्ता था। वह कुछ देर उसे गोदी में लिए उसके बालों पर हाथ फेरती रही। मैंने पहले भी कई बार देखा था कि वह उस कुत्ते को एक बच्चे की तरह प्यार करती है और उसे खाना खिलाकर बच्चों की तरह ही तौलिए से उसका मुँह पोंछती है। मैं कुछ देर बाद वहाँ से उठकर चला, तो मिस पाल पिंकी को गोदी में लिए मुझे बाहर दरवाजे तक छोड़ने आई।

"अंकल को टा टा करो," वह पिंकी की एक अगली टाँग हाथ से हिलाती हुई बोली, "टा टा, टा टा !"

मैं लंबी छुट्टी से वापस आया, तो मिस पाल त्यागपत्र देकर जा चुकी थी। वह अपने बारे में लोगों को इतना ही बताकर गई थी कि वह कुल्लू के किसी गाँव में बसने जा रही है। बाकी बातें लोगों की कल्पना ने अपने-आप जोड़ दी थीं।

बस ब्यास के साथ-साथ मोड़ काट रही थी और मेरा मन हो रहा था कि लौटकर रायसन चला जाऊँ। मैं मनाली में दस दिन अकेला रहकर ऊब गया था, और मिस पाल थी कि कई महीनें से वहाँ रहती थी। मैं जानना चाहता था कि वह अकेली वहाँ कैसा महसूस करती है और नौकरी छोड़ने के बाद से उसने क्या-क्या कुछ कर डाला है। यूँ एक अपरिचित स्थान पर किसी पुराने परिचित से मिलने और बात करने का भी अपना आकर्षण होता है। बस जब कुल्लू पहुँच कर रुकी, तो मैंने अपना सामान वहाँ उतरवाकर हिमाचल राज्य परिवहन के दफ्तर में रखवा दिया और रायसन के लिए वापसी की पहली बस पकड़ ली। बस ने पंद्रह-बीस मिनट में मुझे रायसन के बाजार में उतार दिया। मैंने वहाँ एक दुकानदार से पूछा कि मिस पाल कहाँ रहती हैं।

"मिस पाल कौन है, भाई?" दुकानदार ने अपने पास बैठे युवक से पूछा।

"वह तो नहीं, वह कटे बालों वाली मिस?"

"हाँ-हाँ, वही होगी।"

दुकान में और भी चार-पाँच व्यक्ति थे। उन सबकी आँखें मेरी तरफ घूम गईं। मुझे लगा जैसे वे मन में यह तय करना चाह रहे हों कि कटे बालों वाली मिस के साथ मेरा क्या रिश्ता होगा।

"चलिए, मैं आपको उसके यहाँ छोड़ आता हूँ।" कहकर युवक दुकान से उतर आया। सड़क पर मेरे साथ चलते हुए उसने पूछा, "क्यों भाई साहब यह मिस क्या अकेली ही हैं या...?"

"हाँ, अकेली ही हैं।"

कुछ देर हम लोग चुप रहकर चलते रहे। फिर उसने पूछा, "आप उसके क्या लगते हैं?"

मुझे समझ नहीं आया कि मैं उसको क्या उत्तर दूँ। पल भर सोचकर मैंने कहा, "मैं उसका रिश्तेदार नहीं हूँ। उसे वैसे ही जानता हूँ।"

सड़क से बाईं तरफ थोड़ा ऊपर को जाकर हम लोग एक खुले मैदान में पहुँच गए। मैदान चारों तरफ से पेड़ों से घिरा था और बीच में पाँच-छह जालीदार कॉटेज बने थे, जो बड़े-बड़े मुर्गीखानों जैसे लगते थे। लड़का मुझे बताकर कि उनमें पहला कॉटेज मिस पाल का है, वहाँ से लौट गया। मैंने जाकर कॉटेज का दरवाजा खटखटाया।

"कौन है?" अंदर से मिस पाल की आवाज सुनाई दी।

"एक मेहमान है मिस, दरवाजा खोलो।"

"दरवाजा खुला है, आ जाइए।"

मैंने दरवाजा धकेलकर खोल लिया और अंदर चला गया। मिस पाल ने एक चारपाई पर अपना गद्दा लगा रखा था और उसी तरह दो तकियों के बीच लेटी थी जैसे दिल्ली में अपने तख्त पर लेटी रहती थी। सिरहाने के पास एक खुली हुई पुस्तक रखी थी- बर्ट्रेंड रसेल की 'कांक्वेस्ट ऑफ हेपीनेस'। मैं देखकर तय नहीं कर सका कि वह पुस्तक पढ़ रही थी या लेटी हुई सिर्फ छत की तरफ देख रही थी। मुझे देखते ही वह चौंककर बैठ गई।

"अरे तुम...?"

"हाँ, मैं। तुमने सोचा भी नहीं होगा कि गया आदमी फिर वापस भी आ सकता है।"

"बहुत अजीब आदमी हो तुम ! वापस आना था, तो उसी समय क्यों नहीं उतर गए !"

"बजाय इसके कि शुक्रिया अदा करो जो सात मील जाकर वापस चला आया हूँ...।"

"शुक्रिया अदा करती अगर तुम उसी समय उतर जाते और मुझे बस में अपनी सीट ले लेने देते।"

मैंने ठहाका लगाया और बैठने के लिए जगह ढूँढ़ने लगा। वहाँ भी चारों तरफ वही बिखराव और अव्यवस्था थी जो दिल्ली में उसके घर दिखाई दिया करती थी। हर चीज हर दूसरी चीज की जगह काम में लाई जा रही थी। एक कुर्सी ऊपर से नीचे तक मैले कपड़ों से लदी थी। दूसरी पर कुछ रंग बिखरे थे और एक प्लेट रखी थी जिसमें बहुत-सी कीलें पड़ी थीं।

"बैठो, मैं झट से तुम्हारे लिए चाय बनाती हूँ," मिस पाल व्यस्त होकर उठने लगी।

"अभी मुझसे बैठने को तो कहा नहीं, और चाय की फ़िक्र पहले से करने लगीं?" मैंने कहा, "मुझे बैठने की जगह बता दो और चाय-वाय रहने दो। इस वक्त तुम्हारी 'बोहीमियन चाय' पीने का जरा मन नहीं है।"

"तो मत पियो। मुझे कौन झंझट करना अच्छा लगता है ! बैठने की जगह मैं अभी बनाए देती हूँ।" और कपड़े-अपड़े हटाकर उसने एक कुर्सी खाली कर दी। बाईं तरफ एक बड़ी-सी मेज थी, पर उस पर भी इतनी चीजें पड़ी थीं कि कहीं कुहनी रखने तक की जगह नहीं थी। मैंने बैठकर टाँगें फैलाने की कोशिश की तो पता चला कपड़ों के ढेर के नीचे मिस पाल ने अपने बनाए खाके रख रखे हैं। मिस पाल फिर से अपने बिस्तर में तकियों के सहारे बैठ गई थी। गद्दे पर उसने वही झीना रेशमी कपड़ा बिछा रखा था, जिसे देखकर मुझे चिढ़ हुआ करती थी। मेरा उस समय भी मन हुआ कि उस कपड़े को निकालकर फाड़ दूँ या कहीं आग में झोंक दूँ। मैंने सिगरेट सुलगाने के लिए मेज से दियासलाई की डिबिया उठाई मगर खोलते ही वापस रख दी। डिबिया में दियासलाइयाँ नहीं थीं, गुलाबी-सा रंग भरा था। मैंने चारों तरफ नजर दौड़ाई, मगर और डिबिया कहीं दिखाई नहीं दी।

"दियासलाई किचन में होगी, मैं अभी लाती हूँ," कहती हुई मिस पाल फिर उठी और कमरे से चली गई। मैं उतनी देर आसपास देखता रहा। मुझे फिर उस दिन की याद हो आई जिस दिन मैं मिस पाल के घर देर तक बैठा उससे बातें करता रहा था। पिंकी से मिस पाल के 'टा टा' कराने की बात याद आने से मैं हँस दिया।

तभी मिस पाल दियासलाई की डिबिया लिए आ गई। मेरा अकेले में हँसना शायद उसे बहुत अस्वाभाविक लगा। वह सहसा गंभीर हो गई।

"किसी ने कुछ पिला-विला दिया है क्या? उसने मजाक और शिकायत के स्वर में कहा।

"मैं अपने इस तरह लौटकर आने की बात पर हँस रहा हूँ।" और जैसे अपने को ही अपने झूठ का विश्वास दिलाने के लिए मैंने अपनी हँसी की नकल की और कहा, "मैं सोच भी नहीं सकता था कि इस अनजान जगह पर अचानक तुमसे भेंट हो जाएगी? और तुम्हीं ने कहाँ सोचा होगा कि जो आदमी बस में आगे चला गया था, वह घंटा-भर बाद तुम्हारे कमरे में बैठा तुमसे बात कर रहा होगा !"

और विश्वास करके कि मैंने अपने हँसने के कारण की व्याख्या कर दी है, मैंने पूछा, "तुम्हारा पिंकी कहाँ है? यहाँ दिखाई नहीं दे रहा।"

मिस पाल पहले से भी गंभीर हो गई। मुझे लगा कि उसका चेहरा अब काफी रूखा लगने लगा है। आँखों में लाली भर रही थी, जैसे कई रातों से वह ठीक से सोई न हो।

"पिंकी को यहाँ आने के बाद एक रात सरदी लग गई थी," उसने अपनी उसाँस दबाकर कहा, "मैंने उसे कितनी ही गरम चीजें खिलाईं, पर वह दो दिन में चलता बना।"

मैंने विषय बदल दिया। उससे शिकायत करने लगा कि वह जो अपने बारे में बिना किसी को ठीक बताए दिल्ली से चली आई, यह उसने ठीक नहीं किया।

"दफ्तर में अब भी लोग मिस पाल की बात करके हँसते होंगे !" उसने ऐसे पूछा जैसे वह स्वयं उस मिस पाल से भिन्न हो, जिसके बारे में वह सवाल पूछ रही थी। पर उसकी आँखों में यह जानने की बहुत उत्सुकता भर रही थी कि मैं उसके सवाल का क्या जवाब देता हूँ।

"लोगों की बातों को तुम इतना महत्व क्यों देती हो?" मैंने कहा, "लोग वैसी बातें इसलिए करते हैं कि उनके जीवन में मनोरंजन के दूसरे साधन बहुत कम होते हैं। जब वह व्यक्ति चला जाता है, तो चार दिन में यह भूल जाते हैं कि संसार में उसका अस्तित्व था भी या नहीं।"

कहते-कहते मुझे एहसास हो आया कि मैंने यह कहकर गलती की है। मिस पाल मुझसे यही सुनना चाहती थी कि लोग अब भी उसके बारे में उसी तरह बात करते हैं और उसी तरह उसका मजक उड़ाते हैं- यह विश्वास उसके लिए अपने वर्तमान को सार्थक समझने के लिए जरूरी था।

"हो सकता है तुम्हारे सामने बात न करते हों," मिस पाल बोली, "क्योंकि उन्हें पता है कि हम लोग...अम्‌ı...अ...मित्र रहे हैं। नहीं तो वे कमीने लोग बात करने से बाज आ सकते हैं?"

अच्छा था कि मिस पाल ने मेरी बात पर विश्वास नहीं किया। उसने समझा कि मैं झूठमूठ उसे दिलासा देने की कोशिश कर रहा हूँ।

"हो सकता है बात करते भी हों," मैंने कहा, "पर तुम अब उन लोगों की बात क्यों सोचती हो? कम-से-कम तुम्हारे लिए तो उन लोगों का अब अस्तित्व ही नहीं है।"

"मेरे लिए उन लोगों का अस्तित्व कभी था ही नहीं," मिस पाल ने मुँह बिचका दिया, "मैं उनमें से किसी को अपने पैर के अँगूठे के बराबर भी नहीं समझती थी।"

आँखों से लग रहा था जैसे अब भी उन लोगों को अपने पास देख रही हो और उसे खेद हो कि वह ठीक से उनसे प्रतिशोध क्यों नहीं ले पा रही।

"तुम्हें पता है कि रमेश का फिर लखनऊ ट्रांसफर हो गया है**?**" मैंने बात बदल दी।

"अच्छा, मुझे पता नहीं था **!**"

पर उसने उस संबंध में और जानने की उत्सुकता प्रकट नहीं की। मैं फिर भी उसे रमेश के ट्रांसफर का किस्सा विस्तार से सुनाने लगा। मिस पाल 'हूँ-हाँ' करती रही। पर यह साफ था कि वह अपने अंदर ही कहीं खो गई है।

मैं रमेश की बात कह चुका, तो कुछ क्षण हम दोनों चुप रहे। फिर मिस पाल बोली, "देखो, मैं तुमसे सच कहती हूँ रणजीत, मुझे वहाँ उन लोगों के बीच एक-एक पल काटना असंभव लगता था। मुझे लगता था, मैं नरक में रहती हूँ। तुम्हें पता ही है, मैं दफ्तर में किसी से बात करना भी पसंद नहीं करती थी।"

मैं सुबह मनाली से बिना नाश्ता किए चला था, इसलिए मुझे भूख लग आई थी। मैंने बात को रोटी के प्रकरण पर ले आना उचित समझा। मैंने उससे पूछा कि उसने खाने की क्या व्यवस्था कर रखी है- खुद बनाती है, या कोई नौकर रख रखा है।

"तुम्हें भूख तो नहीं लगी?" मिस पाल अब दफ्तर के माहौल से बाहर निकल आई, "लगी हो, तो उधर मेरे साथ किचन में चलो। जो कुछ बना है, इस वक्त तो तुम्हें उसी में से थोड़ा-बहुत खा लेना होगा। शाम को मैं तुम्हें ठीक से बनाकर खिलाऊँगी। मुझे तुम्हारे आने का पता होता, तो मैं इस वक्त भी कुछ और चीज बना रखती। यहाँ बाजार में तो कुछ मिलता ही नहीं। किसी दिन अच्छी सब्जी मिल जाए, तो समझो बड़े भाग्य का दिन है। कोई दिन होता है जिस दिन एकाध अंडा मिल जाता है।...शाम को

मैं तुम्हारे लिए मछली बनाऊँगी। यहाँ की ट्राउट बहुत अच्छी होती है। मगर मिलती बहुत मुश्किल से है।"

मुझे खुशी हुई कि मैंने सफलतापूर्वक बात का विषय बदल दिया है। मिस पाल बिस्तर से उठकर खड़ी हो गई थी। मैंने भी कुर्सी से उठते हुए कहा, "आओ, चलकर तुम्हारा रसोईघर तो देख लूँ। इस समय मुझे कसकर भूख लगी है,इसलिए जो कुछ भी बना है वह मुझे ट्राउट से अच्छा लगेगा। शाम को मैं जोगिन्दरनगर पहुँच जाऊँगा।"

मिस पाल दरवाजे से बाहर निकलती हुई सहसा रुक गई।

"तुम्हें शाम को जोगिन्दरनगर ही पहुँचना है तो लौटकर क्यों आए थे? यह बात तुम गाँठ में बाँध लो कि आज मैं तुम्हें यहाँ से नहीं जाने दूँगी। तुम्हें पता है इन तीन महीनों में तुम मेरे यहाँ पहले ही मेहमान आए हो? मैं तुम्हें आज कैसे जाने दे सकती हूँ?...तुम्हारे साथ कुछ सामान-आमान भी है या ऐसे ही चले आए थे?"

मैंने उसे बताया कि मैं अपना सामान हिमाचल राज्य परिवहन के दफ्तर में छोड़ आया हूँ और उससे कह आया हूँ कि दो घंटे में मैं लौट आऊँगा।

"मैं अभी पोस्टमास्टर से वहाँ टेलीफोन करा दूँगी। कल तक तुम्हारा सामान यहाँ ले आएँगे। तुम कम-से-कम एक सप्ताह यहाँ रहोगे। समझे? मुझे पता होता कि तुम मनाली में आए हुए हो तो मैं भी कुछ दिन के लिए वहाँ चली आती। आजकल तो मैं यहाँ...खैर...तुम पहले उधर तो आओ, नहीं भूख के मारे ही यहाँ से भाग जाओगे।"

मैं इस नई स्थिति के लिए तैयार नहीं था। उस संबंध में बाद में बात करने की सोचकर मैं उसके साथ रसोईघर में चला गया। रसोईघर में कमरे जितनी अराजकता नहीं थी, शायद इसलिए कि वहाँ सामान ही बहुत कम था। एक कपड़े की आरामकुर्सी थी, जो लगभग खाली ही थी- उस पर सिर्फ नमक का एक डिब्बा रखा हुआ था। शायद मिस पाल उस पर बैठकर खाना बनाती थी। खाना बनाने का और सारा सामान एक टूटी हुई मेज पर रखा था। कुर्सी पर रखा हुआ डिब्बा उसने जल्दी से उठाकर मेज पर रख दिया और इस तरह मेरे बैठने के लिए जगह कर दी।

फिर मिस पाल ने जल्दी-जल्दी स्टोव जलाया और सब्जी की पतीली उस पर रख दी। कलछी साफ नहीं थी, वह उसे साफ करने के लिए बाहर चली गई। लौटकर उसे कलछी को पोंछने के लिए कोई कपड़ा नहीं मिला। उसने अपनी कमीज से ही उसे पोंछ लिया और सब्जी को हिलाने लगी।

"दो आदमियों का खाना है भी या दोनों को ही भूखे रहना पड़ेगा?" मैंने पूछा।

"खाना बहुत है," मिस पाल झुककर पतीली में देखती हुई बोली।

"क्या-क्या है?"

मिस पाल कलछी से पतीली में टटोलकर देखने लगी।

"बहुत कुछ है। आलू भी हैं, बैंगन भी हैं और शायद...शायद बीच में एकाध टिंडा भी है। यह सब्जी मैंने परसों बनाई थी।"

"परसों?" मैं ऐसे चौंक गया जैसे मेरा माथा सहसा किसी चीज से टकरा गया हो। मिस पाल कलछी चलाती रही।

"हर रोज तो नहीं बना पाती हूँ," वह बोली। रोज बनाने लगूँ तो बस खाना बनाने की ही हो रहूँ। और अम्ïा...अ...अपने अकेली के लिए रोज बनाने का उत्साह भी तो नहीं होता। कई बार तो मैं सप्ताह-भर का खाना एक साथ बना लेती हूँ और फिर निश्चिंत होकर खाती रहती हूँ। कहो तो तुम्हारे लिए मैं अभी ताजा बना दूँ।"

"तो चपातियाँ भी क्या परसों की ही बना रखी हैं?" मैं अनायास कुर्सी से उठ खड़ा हुआ।

"आओ, इधर आकर देख लो, खा सकोगे या नहीं।" वह कोने में रखे हुए बेंत के संदूक के पास चली गई। मैं भी उसके पास पहुँच गया। मिस पाल ने संदूक का ढकना उठा दिया। संदूक में पच्चीस-तीस खुश्क चपातियाँ पड़ी थीं। सूखकर उन सबने कई तरह की आकृतियाँ धारण कर ली थीं। मैं संदूक के पास से आकर फिर कुर्सी पर बैठ गया।

"तुम्हारे लिए ताजा चपातियाँ बना देती हूँ," मिस पाल एक अपराधी की तरह देखती हुई बोली।

"नहीं-नहीं, जो कुछ बना रखा है वही खाएँगे," मैंने कहा। मगर अपनी इस भलमनसाहत के लिए मेरा मन अंदर-ही-अंदर कुढ़ गया।

मिस पाल संदूक का ढक्कन बंद करके स्टोव के पास लौट गई।

"सब्जी तीन दिन से ज्यादा नहीं चलती," वह बोली, "बाद में मैं जैम, प्याज और नमक से काम चलाती हूँ। यहाँ अलूचे बहुत मिल जाते हैं, इसलिए मैंने बहुत-सा अलूचे का जैम बना रखा है। खाकर देखो, अच्छा जैम है।...ठहरो,तुम्हें प्लेट देती हूँ।"

वह फिर जल्दी से बाहर चली गई और कमरे से कीलोंवाली प्लेट खाली करके ले आई।

"गिलास में अम्...अ," वह आकर बोली, "सरसों का तेल रखा है। पानी तुम प्याली में ही ले लोगे या...?"

ट्राउट मछली...खाना खाते समय और खाना खा चुकने के बाद भी मिस पाल के दिमाग पर ट्राउट मछली की बात ही सवार रही। जैसे भी हो, शाम को वह ट्राउट मछली बनाएगी। उसके हठ की वजह से मैंने उससे कह दिया था कि मैं अगले दिन सुबह तक वहाँ रह जाऊँगा। मिस पाल ने आगे का फैसला अगले दिन पर छोड़ दिया था। उसे शाम के लिए कई और चीजों का इंतजाम करना था, क्योंकि ट्राउट मछली आसानी से तो नहीं बन जाती। पहली चीज घी चाहिए था। डिब्बे में घी नाममात्र को ही था। प्याज और मसाला भी घर में नहीं था। मिट्टी का तेल भी चाहिए था। खाने के बाद हम लोग घूमने के लिए निकले तो पहले वह मुझे साथ बाजार में ले गई। हटवार के पास भी घी नहीं था। उसके लिए मिस पाल ने पोस्टमास्टर से अनुरोध किया कि वह अपने घर से उसे शाम के लिए आधा सेर घी भिजवा दे, अगले दिन कुल्लू से लाकर लौटा देगी। उससे उसने यह भी कहा कि वह अपने घर के थोड़े-से फ्रेंच बीन भी उतरवाकर उसे भेज दे, और कोई मछलीवाला उधर से गुजरे तो उसके लिए सेर-भर ट्राउट ले रखे।

"सब्बरवाल साहब, मैं आपको बहुत तकलीफ देती हूँ," वह चलने से पहले सात-आठ बार उसे धन्यवाद देकर बोली, "मगर देखिए, मेरे मेहमान आए हुए हैं, और यहाँ ट्राउट के अलावा कोई अच्छी चीज मिलती नहीं। देखती हूँ, अगर बाली मुझे मिल जाए तो मैं उससे कहूँगी कि वह मुझे दरिया से एक मछली पकड़ दे। मगर बाली का कोई भरोसा नहीं। आप जरूर मेरे लिए ले रखिएगा। मैंने मिसेज एटकिन्सन को भी कहला दिया है। उन्होंने भी ले ली तो मैं आज और कल दोनों दिन बना लूँगी। ध्यान रखिएगा। कई बार मछलीवाला आवाज नहीं लगाता और ऐसे ही निकल जाता है। थैंक यू। थैंक यू वेरी मच !"

मेरे सामान के लिए उसने कुल्लू फोन भी करा दिया। अब सड़क पर चलती हुई वह सुबह के नाश्ते की बात करने लगी।

"रात को तो ट्राउट हो जाएगी, मगर सुबह नाश्ता क्या बनाया जाए? डबलरोटी यहाँ नहीं मिलेगी, नहीं तो मैं तुम्हें शहद के टोस्ट ही बनाकर खिलाती। अच्छा खैर, देखो...।"

सड़क पर खुली धूप फैली थी और भेड़ों और पश्म के बकरों का रेवड़ हमारे आगे-आगे चल रहा था। साथ दो कुत्ते जीभ लपलपाते हुए पहरेदारी करते जा रहे थे। सामने से एक जीप के आ जाने से रेवड़ में खलबली मच गई। बकरीवाले भेड़ों को पहाड़ की तरफ धकेलने लगे। एक भेड़ का बच्चा ढलान से फिसल गया और नीचे से सिर उठाकर मिमियाने लगा। किसी बकरीवाले का ध्यान उसकी तरफ नहीं गया तो मिस पाल सहसा परेशान हो उठी, "ए भाई, देखो वह बच्चा नीचे जा गिरा है। बकरीवाले, एक बच्चा नीचे खाई में गिर गया है, उसे उठा लाओ। ए भाई !"

एक दिन पहले वर्षा हुई थी, इसलिए ब्यास खूब चढ़ा हुआ था। नुकीली चट्टानों से छिलता और कटता हुआ पानी शोर करता हुआ बह रहा था। सामने दरिया पार करने का झूला था। झूले की चर्खियाँ घूम रही थीं, रस्सियाँ इकट्ठी हो रही थीं और झूला दो व्यक्तियों को लिए हुए इस पार से उस पार जा रहा था। सहसा झूले में बैठे हुए दोनों व्यक्ति'ही-ही-ही-ही' करके हँसने लगे, जैसे किसी को चिढ़ा रहे हों। फिर उनमें से एक ने जोर से छींक दिया। झूला उस पार पहुँच गया और वे व्यक्ति उसी तरह हँसते और छींकते हुए उससे उतर गए। झूला छोड़ दिया गया, और उसकी रस्सियाँ इस सिरे से उस सिरे तक आधी गोलाइयों में फैल गईं। जो व्यक्ति उधर उतरे थे, वे उस किनारे से फिर एक बार जोर से हँसे। तभी झूला खींचने वालों में एक लड़का मचान से उतरकर हमारे पास आ गया। वह ऐसे बात करने लगा जैसे अभी-अभी कोई दुर्घटना होकर हटी हो।

"मिस साहब," उसने कहा, यह वही सुदर्शन है, जिसने आपके कुत्ते को कुछ खिलाया था। यह अब भी शरारत करने से बाज नहीं आता।"

उन व्यक्तियों के हँसने और छींकने का मिस पाल पर उतना असर नहीं हुआ था जितना उस लड़के की बात का हुआ था। उसका चेहरा एकदम से उतर गया और आवाज खुश्क हो गई।

"यह उधर के गाँव का आदमी है न?" उसने पूछा।

"हाँ, मिस साहब !"

"तुम पोस्टमास्टर को बताना। वे अपने-आप इसे ठीक कर लेंगे।"

"मिस साहब, यह हमसे कहता है कि यह मिस साहब... !"

"तुम इस वक्त जाओ अपना काम करो," मिस पाल उसे झिड़ककर बोली, "पोस्टमास्टर से कहना वे इसे एक दिन में ठीक कर देंगे।"

"मगर मिस साहब... !"

"जाओ, फिर कभी उधर आकर बात करना।"

लड़के की समझ में नहीं आया कि मिस साहब से बात करने में उस समय उससे क्या अपराध हुआ है। वह सिर लटकाए हुए चुपचाप वहाँ से लौट गया।

कुछ देर हम लोग वहीं रुके रहे। मिस पाल जैसे थकी हुई-सी सड़क के किनारे एक बड़े-से पत्थर पर बैठ गई। मैं दरिया के उस पार पहाड़ की चोटी पर उगे हुए वृक्षों की लंबी पंक्ति को देखने लगा, जो नीले आकाश और गुब्बारे जैसे सफेद बादलों के बीच खिंची हुई लकीर-सी लगती थी। दरिया के दोनों तरफ पुल के सलेटी खंभे खड़े थे, जिन पर अभी पुल नहीं बना था। खम्भों के आसपास से झड़कर थोड़ी-थोड़ी मिट्टी दरिया में गिर रही थी। मैंने उधर से आँखें हटाकर मिस पाल की तरफ देखा। मिस पाल मेरी तरफ देख रही थी। शायद वह जानना चाहती थी कि झूलेवाले लड़के की बात का मेरे मन पर क्या प्रभाव पड़ा है।

"तो आगे चलें?" मुझसे आँखें मिलते ही उसने पूछा।

"हाँ, चलो।"

मिस पाल उठ खड़ी हुई। उसकी साँस कुछ-कुछ फूल रही थी। वह चलती हुई मुझे बताने लगी कि वहाँ के लोगों में कितनी तरह के अंधविश्वास हैं। जब पिंकी बीमार हुआ तो वहाँ के लोगों ने सोचा था कि किसी ने उसे कुछ खिला-विला दिया है।

"ये अनपढ़ लोग हैं। मैंने इनकी बातों का विरोध भी नहीं किया। ये लोग अपने अंधविश्वास एक दिन में थोड़े ही छोड़ सकते हैं ! इस चीज में जाने अभी कितने बरस लगेंगे !"

और रास्ते में चलते हुए वह बार-बार मेरी तरफ देखती रही कि मुझे उसकी बात पर विश्वास हुआ है या नहीं। मैंने सड़क से एक छोटा-सा पत्थर उठा लिया था और

चुपचाप उसे उछालने लगा था। काफी देर तक हम लोग खामोश चलते रहे। वह खामोशी मुझे अस्वाभाविक लगने लगी तो मैंने मिस पाल से वापस घर चलने का प्रस्ताव किया।

"चलो, चलकर तुम्हारी बनाई हुई नई तस्वीरें ही देखी जाएँ," मैंने कहा, "इन तीन-चार महीनों में तो तुमने काफी काम कर लिया होगा।"

"पहले घर चलकर एक-एक प्याली चाय पीते हैं," मिस पाल बोली, "सचमुच इस समय मैं चाय की गरम प्याली के लिए जिंदगी की कोई भी चीज कुर्बान कर सकती हूँ। मेरा तो मन था कि घर से चलने से पहले ही एक-एक प्याली पी लेते, मगर फिर मैंने कहा कि पोस्टमास्टर से कहने में देर हो जाएगी तो मछलीवाला निकल जाएगा।"

इस बात ने मेरे मन को थोड़ा गुदगुदा दिया कि तीन महीने में आया हुआ पहला मेहमान उस समय मिस पाल के लिए अपनी तस्वीरों से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

लौटकर कॉटेज में पहुँचते ही मिस पाल चाय बनाने में व्यस्त हो गई। वह आते हुए काफी थक गई थी, क्योंकि जरा-सी चढ़ाई चढ़ने में ही उसकी साँस फूलने लगती थी, मगर वह जरा देर भी सुस्ताने के लिए नहीं रुकी। चाय के लिए उसकी यह व्यस्तता मुझे बहुत अस्वाभाविक लगी, शायद इसलिए कि मुझे खुद चाय की जरूरत महसूस नहीं हो रही थी। मिस पाल इस तरह चम्मचों और प्यालियों को ढूँढ़ने के लिए परेशान हो रही थी, जैसे उसके दस मेहमान चाय का इंतजार कर रहे हों और उसे समझ न आ रहा हो कि कैसे जल्दी से सारा इंतजाम करे।

मैं घूमकर कमरे में और बरामदे में लगी हुई तस्वीरों को देखने लगा। जिस-जिस तस्वीर पर भी मेरी नजर पड़ी,मुझे लगा वह मेरी पहले की देखी हुई है। कुछ बड़ी तस्वीरें थीं जो मिस पाल पंजाब के एक मेले से बनाकर लाई थी। वह अजीब-अजीब-से चेहरे थे, जिन पर हम लोग एक बार फब्तियाँ कसते रहे थे। जाने क्यों, मिस पाल अपने चित्रों के लिए सदा ऐसे ही चेहरे चुनती थी जो किसी-न-किसी रूप में विकृत हों ! मैंने सारा कमरा और बरामदा घूम लिया। दो-एक अधूरी तस्वीरों को छोड़कर मुझे एक भी नई चीज दिखाई नहीं दी मैंने रसोईघर में जाकर मिस पाल से पूछा कि उसकी नई तस्वीरें कहाँ हैं।

"अजी छोड़ो भी," मिस पाल प्यालियाँ धोती हुई बोली, "चाय की प्याली पीकर हम लोग ऊपर की तरफ घूमने चलते हैं। ऊपर एक बहुत पुराना मंदिर है। वहाँ का पुजारी तुम्हें ऐसे-ऐसे किस्से सुनाएगा कि तुम सुनकर हैरान रह जाओगे। एक दिन वह बता

रहा था कि यहाँ कुछ मंदिर ऐसे हैं, जहाँ लोग पहले तो देवता से वर्षा के लिए प्रार्थना करते हैं, मगर बाद में अगर देवता वर्षा नहीं देता तो उसे हिडिंबा के मंदिर में ले जाकर रस्सी से लटका देते हैं। है नहीं मजेदार बात? जो देवता तुम्हारा काम न करे, उसे फाँसी लगा दो। मैं कहती हूँ रणजीत, यहाँ लोगों में इतने अंधविश्वास हैं, इतने अंधविश्वास हैं कि क्या कहा जाए ! ये लोग अभी तक जैसे कौरवों-पांडवों के जमाने में ही जीते हैं, आज के जमाने से इनका कोई संबंध ही नहीं है।"

और एक बार उड़ती नजर से मुझे देखकर वह चीनी ढूँढ़ने में व्यस्त हो गई। "अरे चीनी कहाँ चली गई? अभी हाथ में थी, और अभी न जाने कहाँ रख दी? देखो, कैसी भुलक्कड़ हो गई हूँ ! मेरा तो बस एक ही इलाज है कि कोई हाथ में छड़ी लेकर मुझे ठीक करे। यह भी कोई रहने का ढंग है जैसे मैं रहती हूँ?"

"तुमने यहाँ के कुछ लैंडस्केप नहीं बनाए**?**" मैंने पूछा।

"तस्वीरें तो बहुत-सी शुरू कर रखी हैं, पर अभी तक पूरी नहीं कर सकी," मिस पाल जैसे उस मुश्किल स्थिति से बचने का प्रयत्न करती हुई बोली, "अब किसी दिन लगकर सबकी-सब तस्वीरें पूरी करूँगी। तारपीन का तेल भी खत्म हो चुका है, किसी दिन जाकर लाना है। कई दिनों से सोच रही थी कि मंडी जाकर कैनवस और रंग भी ले आऊँ, पर यूँ ही आलस कर जाती हूँ। कुछ ड्राइंग पेपर भी जिल्द कराने हैं। अब जाऊँगी किसी दिन और सारे काम एक साथ ही कर आऊँगी।"

बात करते हुए मिस पाल की आँखें झुकी जा रही थीं, जैसे वह अपने ही सामने किसी चीज के लिए अपराधी हो, और लगातार बात करके अपने अपराध के अनुभव को छिपाना चाहती हो। मैं चुप रहकर उसे चाय में चीनी मिलाते देखता रहा। उसे देखते हुए उस समय मेरे मन में कुछ वैसी उदासी भरने लगी जैसी एक निर्जन समुद्र-तट पर या ऊँची पहाड़ियों से घिरी हुई किसी एकांत पथरीली घाटी में जाकर अनायास मन में भर जाती है।

"कल से एक तो मैं अपने घर को ठीक करूँगी," मिस पाल क्षण-भर बाद फिर उसी तरह बिना रुके बात करने लगी, "एक तो घर का सारा सामान ठीक ढंग से लगाना है। तुम्हें पता है, मैंने कितने चाव से दिल्ली में अपने कमरे के लिए जाली के पर्दे बनवाए थे? वे पर्दे यहाँ ज्यों-के-त्यों बक्स में बंद पड़े हैं; मेरा लगाने को मन ही नहीं हुआ। मैं कल ही तरखान से कहकर पर्दों के लिए चौखटे बनवाऊँगी। खाने-पीने का थोड़ा-बहुत सामान भी घर में रखना ही चाहिए; बिस्कुट, मक्खन, डबलरोटी और अचार का होना

तो बहुत ही जरूरी है। जो चीजें कुल्लू से मिल जाती हैं वे तो मैं लाकर रख ही सकती हूँ।...तारपीन का तेल भी मुझे कुल्लू से ही मिल जाएगा।"

उसने चाय की प्याली मेरे हाथ में दे दी तो भी मेरे मुँह से कोई बात नहीं निकली, और मैं चुपचाप छोटे-छोटे घूँट भरने लगा। मेरे मन को उस समय एक तरह की जड़ता ने घेर लिया था। कहाँ मिस पाल के बारे में दिल्ली के लोगों से सुनी हुई वे सब बातें और कहाँ उसके जीवन की यह एकांत विडंबना!

ट्राउट मछली ! मिस पाल की सारी परेशानी के बावजूद उस दिन उसे ट्राउट नहीं मिल सकी। पोस्टमास्टर ने बताया कि मछलीवाला उस दिन आया ही नहीं। मिस पाल के बहुत-बहुत खुशामद करने पर भी मकान-मालकिन का चौकीदार बाली दरिया से मछली पकड़ने के लिए राजी नहीं हुआ। उसने कहा कि वह अपनी छड़ी पॉलिश कर रहा है, उसे फुरसत नहीं है। मिसेज एटकिन्सन के बच्चों ने एक मछली पकड़ी थी। मगर उसके पति ने उस दिन खासतौर पर मछली की कतलियों के लिए कहा था, इसलिए वह अपनी मछली मिस पाल को नहीं दे सकती थी। हाँ,पोस्टमास्टर ने फ्रेंच बीन जरूर भेज दिए। चावल और सूखे फ्रेंच बीन ! रात की रोटी के लिए मिस पाल का सारा उत्साह ठंडा पड़ गया। खाना बनाने में उसका मन भी नहीं लगा, जिससे चावल थोड़ा नीचे लग गए। खाना खाते समय मिस पाल बस अफसोस ही प्रकट करती रही।

"मैं बहुत बदकिस्मत हूँ रणजीत, हर लिहाज से मैं बहुत ही बदकिस्मत हूँ" खाना खाने के बाद हम लोग बाहर मैदान में कुर्सियाँ निकालकर बैठ गए तो उसने कहा। वह सिर के पीछे हाथ रखे आकाश की ओर देख रही थी। बारहीं या तेरहीं की रात होने से आकाश में तीन तरफ खुली चाँदनी फैली थी। ब्यास की आवाज वातावरण में एक गूँज पैदा कर रही थी। वृक्षों की सरसराहट के अतिरिक्त मैदान की घास से भी एक धीमी-सी सरसराहट निकलती प्रतीत होती थी। हवा तेज थी और सामने पहाड़ के पीछे से उठता हुआ बादल धीरे-धीरे चाँद की तरफ सरक रहा था।

"क्या बात है मिस पाल, तुम इस तरह गुमसुम क्यों हो रही हो?" मैंने कहा, "चावल थोड़े खराब हो गए, तो इसमें इस तरह उदास होने की क्या बात है !"

मिस पाल सामने पहाड़ की धुँधली रेखा को देखती रही, जैसे उसमें कोई चीज खोज रही हो।

"मैं सोचती हूँ रणजीत कि मेरे जीने का कोई भी अर्थ नहीं है," उसने कहा।

और वह मुझे अपने आरंभिक जीवन की कहानी सुनाने लगी। उसे बहुत बड़ी शिकायत थी कि आरंभ में अपने घर में भी उसे जरा सुख नहीं मिला, यहाँ तक कि अपने माता-पिता का स्नेह भी उसे नहीं मिला। उसकी माँ ने- उसकी अपनी माँ ने- भी उसे प्यार नहीं किया। इसी वजह से पंद्रह साल पहले वह अपना घर छोड़कर नौकरी करने के लिए निकल आई थी।

"सोचो, माँ को मेरा घर में होना ही बुरा लगता था। पिताजी को मेरे संगीत सीखने से चिढ़ थी। वे कहा करते थे कि मेरा घर-घर है रंडीखाना नहीं। भाइयों का जो थोड़ा-बहुत प्यार था, वह भी भाभियों के आने के बाद छिन गया। मैंने आज तक कितनी-कितनी मुश्किल से अपनी अम्ï...अ...पवित्रता को बचाया है, यह मैं ही जानती हूँ। तुम सोच सकते हो कि एक अकेली लड़की के लिए यह कितना मुश्किल होता है। मेरा लाहौर की तरफ घूमने जाने को मन था; वहाँ की कुछ तस्वीरें बनाना चाहती थी, मगर मैं वहाँ नहीं गई, क्योंकि मैं सोचती थी कि मर्द की पशु-शक्ति के सामने अम्ïा... अ...मैं अकेली क्या कर सकूँगी। फिर, तुम्हें पता है कि डिपार्टमेंट के लोग वहाँ मेरे बारे में कैसी बुरी-बुरी बातें किया करते थे। इसीलिए मैं कहती हूँ कि मुझे वहाँ के एक-एक आदमी से नफरत है। वे तुम्हारे बुखारिया और मिर्जा और जोरावरसिंह। मैं तो कभी ऐसे लोगों के साथ बैठकर एक प्याली चाय भी पीना पसंद नहीं करती थी। तुम्हें याद है, एक बार जब जोरावरसिंह ने मुझसे कहा था..."

और फिर वह दफ्तर के जीवन की कई छोटी-छोटी घटनाएँ दोहराने लगी। जब मैंने देखा कि वह फिर से उसी वातावरण में जाकर खामखाह अपना गुस्सा भड़का रही है तो मैंने उससे फिर कहा कि वह अब दफ्तर के लोगों के बारे में न सोचे, अपने संगीत और अपने चित्रों की बात ही सोचे।

"तुम यहाँ रहकर कुछ अच्छी-अच्छी चीजें बना लो, फिर दिल्ली आकर अपनी प्रदर्शनी करना।" मैंने कहा, "जब लोग तुम्हारी चीजें देखेंगे और तुम्हारा नाम सुनेंगे तो अपने-आप तुम्हारी कद्र करेंगे।"

"न, मैं प्रदर्शनी-अदर्शनी के किसी चक्कर में नहीं पड़ूँगी।" मिस पाल उसी तरह सामने की तरफ देखती हुई बोली, "तुम जानते ही हो इन सब चीजों में कितनी पॉलिटिक्स चलती है। मैं उस पॉलिटिक्स में नहीं पड़ना चाहती। मेरे पास अभी तीन-चार हजार रुपए हैं, जिनसे मेरा काफी दिन गुजारा चल जाएगा। जब ये रुपए चुक जाएँगे, तो..." और वह जैसे कुछ सोचती हुई चुप कर गई।

मैं आगे की बात सुनने के लिए बहुत उत्सुक था। मगर मिस पाल कुछ देर बाद कंधे हिलाकर बोली, "...तो भी कुछ-न-कुछ हो ही जाएगा। अभी वह वक्त आए तो सही।"

बादल ऊँचा उठ रहा था और वातावरण में ठंडक बढ़ती जा रही थी। जंगल की तरफ से आती हुई हवा की गूँज शरीर में बार-बार सिहरन भर देती थी। साथ के कॉटेज में रेडियो पर पश्चिमी संगीत चल रहा था। उससे आगे के कॉटेज में लोग खिलखिलाकर हँस रहे थे। मिस पाल अपनी आँखें मूँदें हुए मुझे बताने लगी कि "होशियारपुर में उसने भृगुसंहिता से अपनी कुंडली निकलवाई थी। उस कुंडली के फल के अनुसार इस जन्म में उस पर यह शाप है कि उसे कोई सुख नहीं मिल सकता- न धन का, न ख्याति का, न प्यार का। इसका कारण भी भृगुसंहिता में दिया था। अपने पिछले जन्म में वह सुंदर लड़की थी और नृत्य-संगीत आदि कलाओं में बहुत पटु थी। उसके पिता बहुत धनी थे और वह उनकी अकेली संतान थी। जिस व्यक्ति से उसका ब्याह हुआ वह बहुत सुंदर और धनी था। "मगर मुझे अपनी सुंदरता और अपनी कला का बहुत मान था, इसलिए मैंने अपने पति का आदर नहीं किया। कुछ ही दिनों में वह बेचारा दुखी होकर इस संसार से चल बसा। इसीलिए मुझ पर अब यह शाप है कि इस जन्म में मुझे सुख नहीं मिल सकता।"

मैं चुपचाप उसे देखता रहा। अभी दिन में ही वह वहाँ के लोगों के अंधविश्वासों की चर्चा करती हुई उनका मजाक उड़ा रही थी। सहसा मिस पाल भी बोलते-बोलते चुप कर गई और उसकी आँखें मेरे चेहरे पर स्थिर हो गईं। उसके लिपस्टिक से रँगे हुए ओठों की तह में जैसे उस समय कोई चीज काँप रही थी। काफी देर हम लोग चुप बैठे रहे। बादल ने चाँद को छा लिया था और चारों तरफ गहरा अँधेरा हो रहा था। सहसा साथ के कॉटेज की बत्ती भी बुझ गई, जिससे अँधेरा और भी गहरा लगने लगा।

मिस पाल उसी तरह मेरी तरफ देख रही थी। मुझे महसूस होने लगा कि मेरे आसपास की हवा कुछ भारी हो रही है। मैं सहसा कुर्सी पीछे सरकाकर उठ खड़ा हुआ।

"मेरा ख्याल है, अब रात काफी हो गई है," मैंने कहा, "इसलिए अब चलकर सो रहा जाए। और बातें अब सुबह होंगी।"

"हाँ-हाँ," मिस पाल भी अपनी कुर्सी से उठती हुई बोली, "मैं अभी चलकर बिस्तर बिछा देती हूँ। तुम बताओ, तुम्हारा बिस्तर बरामदे में बिछा दूँ या..."

"हाँ, बरामदे में ही बिछा दो। अंदर काफी गरमी होगी।"

"देख लो, रात को ठंड हो जाएगी।"

"कोई बात नहीं, बरामदे में हवा आती रहेगी तो अच्छा लगेगा।"

और बरामदे में लेटे हुए मैं देर तक जाली के बाहर देखता रहा। बादल पूरे आकाश में छा गया था और दरिया का शब्द बहुत पास आया-सा लगता था। जाली से लगा हुआ मकड़ी का जाला हवा से हिल रहा था। पास ही कोई चूहा कोई चीज कुतर रहा था। अंदर कमरे से बार-बार करवट बदलने की आवाज सुनाई दे जाती थी।

"रणजीत!" अंदर से आवाज आई तो मेरे सारे शरीर में एक सिहरन भर गई।

"मिस पाल !"

"सरदी तो नहीं लग रही?"

"नहीं, बल्कि हवा है, इसलिए अच्छा लग रहा है।"

और तभी टप्-टप्-टप्-टप् मोटी-मोटी बूँदें पड़ने लगीं। पानी की बौछार मेरे बिस्तर पर आने लगी तो मैंने करवट बदली। बरामदे की बत्ती मैंने जलती रहने दी थी, इसलिए कई चीजें इधर-उधर बिखरी नजर आ रही थीं। बिस्तर बिछाते समय मिस पाल को घर की काफी उथल-पुथल करनी पड़ी थी। मेरी चारपाई के पास ही एक तिपाई औंधी पड़ी थी और उससे जरा आगे तस्वीरों के कुछ एक फ्रेम रास्ते में गिरे थे। सामने के कोने में मिस पाल के ब्रश और कपड़े एक ढेर में उलझे हुए पड़े थे।

अंदर की चारपाई चिरमिराई और लकड़ी के फर्श पर पैरों की धप्-धप् आवाज सुनाई देने लगी। फिर सुराही से चुल्लू में पानी पीने की आवाज आने लगी।

"रणजीत !"

"मिस पाल !"

"प्यास तो नहीं लगी?"

"नहीं।"

"अच्छा, सो जाओ।"

कुछ देर मुझे लगता रहा जैसे मेरे आसपास एक बहुत तेज साँस चल रही है जो धीरे-धीरे दबे पैरों, सारे वातावरण पर अधिकार करती जा रही है, और आसपास की हर चीज अपने पर उसका दबाव महसूस कर रही है। पानी की बौछार कुछ धीमी पड़ने लगी तो मैंने फिर से जाली की तरफ करवट बदल ली और पहले की तरह ही बाहर देखने लगा। तभी पास ही झन्न से किसी चीज के गिरने की आवाज सुनाई दी।

"क्या गिरा है रणजीत?" अंदर से आवाज आई।

"पता नहीं, शायद किसी चूहे ने कुछ गिरा दिया है।"

"सचमुच मैं यहाँ चूहों से बहुत तंग आ गई हूँ।"

मैं चुप रहा। अंदर की चारपाई फिर चिरमिराई।

"अच्छा, सो जाओ!"

सारी रात पानी पड़ता रहा। सुबह-सुबह, वर्षा थम गई, मगर आकाश साफ नहीं हुआ। सुबह उठकर चाय के समय तक मेरी मिस पाल से खास बात नहीं हुई। चाय पीते समय भी मिस पाल अधूरे-अधूरे टुकड़ों में ही बात करती रही। मैंने उससे कहा कि मैं अब पहली बस से चला जाऊँगा तो उसने एक बार भी मुझसे रुकने के लिए आग्रह नहीं किया। यूँ साधारण बातचीत में भी मिस पाल काफी तकल्लुफ बरत रही थी, जैसे किसी बिलकुल अपरिचित व्यक्ति से बात कर रही हो। मुझे उसका सारा व्यवहार बहुत अस्वाभाविक लग रहा था। वह जैसे बात न करने के लिए ही अपने को छोटे-छोटे कामों में व्यस्त रख रही थी। मैंने दो-एक बार उससे हल्के-से मजाक करने का भी प्रयत्न किया जिससे तनाव हट जाए और मैं उससे ठीक से विदा लेकर जा सकूँ, मगर मिस पाल के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कराहट भी नहीं आई।

"अच्छा तो मिस पाल, अब चलने की बात की जाए," आखिर मैंने कहा, "तुम कल कह रही थीं कि तुम भी कुल्लू तक साथ ही चलोगी। तो अच्छा होगा कि तुम आज ही वहाँ से अपना सारा सामान भी ले आओ। बाद में तुम फिर आलस कर जाओगी।"

"नहीं, मैं आलस नहीं करूँगी," मिस पाल बोली, "किसी दिन जाकर जो-जो कुछ लाना है सब ले आऊँगी।"

और फिर बरामदे में बिखरे हुए कपड़ों को बिना मतलब ही उठाकर इधर से उधर रखते हुए उसने कहा, "आज बरसात का दिन है, इसलिए आज नहीं जाऊँगी। कल या परसों

किसी समय देखूँगी। लाने के लिए कितनी ही चीजें हैं, इसलिए अच्छी तरह सब सोचकर जाना चाहिए। आज घिरा हुआ दिन है, इसलिए आज नहीं...।"

"घिरा हुआ दिन है तो क्या घर का सामान नहीं आएगा?" मैंने अपने आग्रह से उसे सुलझाने की चेष्टा करते हुए कहा, "तुम मुझे बताओ कि घी और तारपीन के डिब्बे कहाँ रखे हैं। कोई बड़ा थैला हो तो वह भी साथ में ले लो। फुटकर चीजें उसमें आ जाएँगी। यहाँ से जो भी बस मिलेगी, उसमें हम लोग साथ-साथ चले चलेंगे। मैं कुल्लू से बारह बजे की बस पकड़कर आगे चला जाऊँगा। तुम्हें तो उधर से लौटने के लिए सारा दिन बसें मिलती रहेंगी।"

मैं जान-बूझकर इस तरह बात कर रहा था जैसे मिस पाल का साथ चलना निश्चित ही हो, हालाँकि मैं जानता था कि वह टालने का पूरा प्रयत्न करेगी। मिस पाल इधर से उधर जाती हुई ढूँढ़-ढूँढकर अपने करने के लिए काम निकाल रही थी। उसके चेहरे से लग रहा था जैसे मेरी बातें उसे बिलकुल व्यर्थ लग रही हों और वह जल्द-अज-जल्द अपने एकांत में लौट जाना चाहती हो।

"देखो, कभी-कभी यहाँ बस में एक भी सीट नहीं मिलती," उसने कहा, "दो-दो सीटें मिलना तो बहुत ही मुश्किल है। तुम मेरी वजह से अपनी बारह बजे की बस क्यों मिस करते हो? तुम चले जाओ, मैं कल या परसों जाकर जो कुछ भी मुझे लाना है ले आऊँगी।" और जैसे सहसा कोई काम याद आ जाने से वह जल्दी से अपना चेहरा दूसरी तरफ हटाए हुए कमरे में चली गई। कुछ देर में वह पेटीकोट लिए हुए कमरे से बाहर आई। पेटीकोट को टिड्डियाँ काट गई थीं। उसने जैसे नुकसान की परेशानी की वजह से ही चेहरा सख्त किए हुए उसे एक तरफ कोने में फेंक दिया और किसी तरह कठिनाई से बोली, "मैंने तुमसे कह दिया है कि तुम चले जाओ। तुम्हें पता है कि मुझे तो अकेली को ही दो सीटें चाहिए।"

"ये सब बहाने तुम रहने दो," मैंने कहा, "एक बस में जगह नहीं मिलेगी तो दूसरी में मिल जाएगी। तुम इधर आकर मुझे बताओ कि वे डिब्बे कहाँ रखे हैं।"

मिस पाल शायद ज्यादा बात नहीं करना चाहती थी, इसलिए उसने मेरी बात का विरोध नहीं किया।

"अच्छा तुम बैठो, मैं अभी ढूँढ़ती हूँ।" उसने कहा और आँखें बचाती हुई रसोईघर में चली गई।

पहली बस में सचमुच हम लोगों को जगह नहीं मिली। ड्राइवर ने बस वहाँ रोकी ही नहीं, और हाथ के इशारे से कह दिया कि बस में जगह नहीं है। दूसरी बस में भी जगह नहीं थी, मगर किसी तरह कह-कहाकर हमने उसमें अपने लिए जगह बना ली। मगर हम कुल्लू काफी देर से पहुँचे, क्योंकि रात की बरसात से एक जगह सड़क टूट गई थी और उसकी मरम्मत की जा रही थी। हमारे कुल्लू पहुँचने के लगभग साथ ही बारह बजे की बस भी मनाली से आ पहुँची। पौने बारह हो चुके थे। मैंने अंदर जाकर अपने सामान का पता किया, फिर बाहर मिस पाल के पास आ गया। मिस पाल ने खाली डिब्बे अपने दोनों हाथों में सँभाल रखे थे। मैं डिब्बे उसके हाथों से लेने लगा तो उसने अपने हाथ पीछे हटा लिए।

"चलो, पहले बाजार में चलकर तुम्हारा सामान खरीद लें," मैंने कहा।

"अब सामान की बात रहने दो।" उसने कहा, "तुम्हारी बस आ गई है, तुम इसमें चले जाओ। सामान तो मैं किसी भी समय खरीद लूँगी। तुम्हें इसके बाद फिर किसी बस में जगह नहीं मिलेगी। दो बजे की बस मनाली से ही भरी हुई आती है। तुम्हारा एक दिन और यहाँ खराब होगा।"

"दिन खराब होने की क्या बात है।" मैंने कहा, "पहले चलकर बाजार से सामान खरीद लेते हैं। अगर आज सचमुच किसी बस में जगह नहीं मिली तो मैं तुम्हारे साथ लौट चलूँगा और कल किसी बस से चला जाऊँगा। मुझे वापस पहुँचने की ऐसी कोई जल्दी नहीं है।"

"नहीं तुम चले जाओ," मिस पाल हठ के साथ बोली, "अपने लिए खामखाह मैं तुम्हें क्यों परेशान करूँ? अपना सामान तो मैं जब कभी भी ले लूँगी।"

"मगर मुझे लगता है कि आज तुम ये डिब्बे इसी तरह लिए हुए ही लौट जाओगी।"

"अरे नहीं," मिस पाल की आँखें उमड़ आयीं और वह अपने आँसुओं को रोकने के लिए दूसरी तरफ देखने लगी, "तुम समझते हो मैं अपने शरीर की देखभाल ही नहीं करती। अगर न करती तो यह इतना शरीर ऐसे ही होता?...लाओ पैसे दो मैं तुम्हारा टिकट ले आती हूँ। देर करोगे तो इस बस में भी जगह नहीं मिलेगी।"

"तुम इस तरह जिद क्यों करती हो मिस पाल ? मुझे जाने की सचमुच ऐसी कोई जल्दी नहीं है।" मैंने कहा।

"मैंने तुमसे कहा है, तुम पैसे निकालो, मैं तुम्हारा टिकट ले आ...। मगर नहीं, तुम रहने दो। कल का तुम्हारा टिकट मेरी वजह से खराब हुआ था। मैं फिर तुमसे पैसे किसलिए माँग रही हूँ?"

और वह डिब्बे वहीं रखकर झटपट टिकटघर की तरफ बढ़ गई।

"ठहरो, मिस पाल," मैंने असमंजस में अपना बटुआ जेब से निकाल लिया।

"तुम रुको, मैं अभी आ रही हूँ। तुम उतनी देर में अपना सामान निकलवाकर ऊपर रखवाओ।

मेरा मन उस समय न जाने कैसा हो रहा था, फिर भी मैंने अंदर से अपना सामान निकलवाया और बस की छत पर रखवा दिया। मिस पाल तब तक टिकटघर के बाहर ही खड़ी थी। शनिवार होने के कारण उस दिन स्कूल में जल्दी छुट्टी हो गई थी और बहुत-से बच्चे बस्ते लटकाए सुलतानपुर की पहाड़ी से नीचे आ रहे थे। कई बच्चे बस की सवारियों को देखने के लिए वहाँ आसपास जमा हो रहे थे। मिस पाल उस समय प्याजी रंग की सलवार-कमीज पहने थी और ऊपर काला दुपट्टा लिए थी। उन कपड़ों की वजह से उसका शरीर पीछे से और भी फैला हुआ लगता था। बच्चे एक-दूसरे से आगे होते हुए टिकटघर के नजदीक जाने लगे। मिस पाल टिकटघर की खिड़की पर झुकी हुई थी। एक लड़के ने धीरे-से आवाज लगाई, "कमाल है भई कमाल है !"

इस पर आसपास खड़े बहुत-से बच्चे हँस दिए। मुझे लगा जैसे किसी ने मेरे भारी मन पर एक और बड़ा पत्थर डाल दिया हो। बच्चे सबके सब टिकटघर के आसपास जमा हो गए थे और आपस में खुसर-पुसर कर रहे थे। मैं उनसे कुछ कह भी नहीं सकता था, क्योंकि उससे मिस पाल का ध्यान खामखाह उनकी तरफ चला जाता। मैं उधर से अपना ध्यान हटाकर दरिया की तरफ से आते हुए लोगों को देखने लगा। फिर भी बच्चों की खुसर-पुसर मेरे कानों में पड़ती रही। दो लड़कियाँ बहुत धीरे-धीरे आपस में बात कर रही थीं, "मर्द है।"

"नहीं, औरत है।"

"तू सिर के बाल देख, बाकी शरीर देख। मर्द है।"

"तू कपड़े देख, और सब कुछ देख। औरत है।"

"आओ, बच्चो आओ, पास आकर देखो," मिस पाल की आवाज से मैं जैसे चौंक गया। मिस पाल टिकट लेकर खिड़की से हट आई थी। बच्चे उसे आते देखकर 'आ गई, आ गई' कहते भाग खड़े हुए। एक बच्चे ने सड़क के उस तरफ जाकर फिर जोर से आवाज लगाई, "कमाल है भई कमाल है !"

मिस पाल सड़क पर आकर कई कदम बच्चों के पीछे चली गई।

"आओ बच्चों, यहाँ हमारे पास आओ," वह कहती रही, "हम तुम्हें मारेंगे नहीं, टॉफियाँ देंगे। आओ..."

मगर बच्चे पास आने के बजाय और भी दूर भाग गए। मिस पाल कुछ देर सड़क के बीच रुकी रही, फिर लौटकर मेरे पास आ गई। उस समय उसके चेहरे का भाव बहुत विचित्र लग रहा था। उसकी आँखों में आए हुए आँसू नीचे गिरने को हो रहे थे और उन्हें झुठलाने के लिए एक फीकी हँसी का प्रयत्न कर रही थी। उसने अपने ओठों को जाने किस तरह काटा था कि एकाध जगह से उसकी लिपस्टिक नीचे फैल गई थी। उसकी घिसी हुई कमीज की सीवनें कंधे के पास से खुल रही थीं।

"खूबसूरत बच्चे थे; नहीं?" उसने आँखें झपकाते हुए कहा।

मैंने उसकी बात का समर्थन करने के लिए सिर हिलाया तो मुझे लगा कि मेरा सिर पत्थर की तरह भारी हो गया है। उसके बाद मेरी समझ में कुछ नहीं आया कि मिस पाल मुझसे क्या कह रही है और मैं उससे क्या बात कर रहा हूँ; जैसे आँखों और शब्दों के साथ विचारों का कोई संबंध ही नहीं रहा था। मुझे इतना याद है कि मैंने मिस पाल को टिकट के पैसे देने का प्रयत्न किया, मगर वह पीछे हट गई और मेरे बहुत अनुरोध करने पर भी उसने पैसे नहीं लिए। मगर किस अवचेतन प्रक्रिया से हम लोगों के बीच अब तक बातचीत का सूत्र बना रहा, यह मैं नहीं जान सका। मेरे कान उसे बोलते सुन रहे थे और अपने को भी। परन्तु वे जैसे दूर की ध्वनियाँ थीं- अस्फुट, अस्पष्ट और अर्थहीन। जो बात मैं ठीक से सुन सका वह यही थी, "और वहाँ जाकर रणजीत, दफ्तर में मेरे बारे में किसी से बात मत करना। समझे? तुम्हें पता ही है कि वे लोग कितने ओछे हैं। बल्कि अच्छा होगा कि तुम किसी को यह भी न बताओ कि तुम मुझे यहाँ मिले थे। मैं नहीं चाहती कि वहाँ कोई भी मेरे बारे में कुछ जाने या बात करे। समझे।"

बस तब स्टार्ट हो रही थी और मैं खिड़की से झाँककर मिस पाल को देख रहा था। बस चली तो मिस पाल हाथ हिलाने लगी। दोनों खाली डिब्बे वह अपने हाथों में लिए हुए

थी। मैंने भी एक बार उसकी तरफ हाथ हिलाया और बस के मुड़ने तक हिलते हुए खाली डिब्बों को ही देखता रहा।